

**TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

86898
1
50

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.6
V31NE Accession No. P. G. H297
author वर्मा, महादेवी.
title नीरजा. 1945.

This book should be returned on or before the date
marked below.

नी र जा

लेखिका

श्रीमती महादेवी वर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९४५

मूल्य १।-

Printed and Published by K. Mitra, at
The Indian Press, Ltd Allahabad.



लेखिका

जिनके

मधुर कण्ठ से निकले हुए मीरा के पद

प्रभाती और लोरी के समान

बचपन में

मुझे जगाते सुलाते रहे हैं

उन्हीं

जननी को गीता की एक अकिञ्चन

भेंट

वक्तव्य

खड़ी बोली का प्रचार हुए अभी बहुत दिन नहीं हुए; मुश्किल से २०-२५ वर्ष बीते होंगे। इस अल्प अवधि में ही हिन्दी-कविता ने जो उन्नति की है, वह हमारे साहित्य के लिए परम हर्ष का विषय है। बीसवीं शताब्दी के अर्द्धांश के भी पूर्व, वर्तमान हिन्दी-कविता ने प्रगति के पथ पर अपना जो नूतन प्रथम चरण बढ़ाया है, उसकी सफलता को देखते हुए हमें पूर्ण आशा होती है कि यह काल हमारे साहित्य के भावी इतिहास में बड़े गौरव की दृष्टि से देखा जायगा।

श्रीमती महादेवी वर्मा का स्थान हिन्दी की आधुनिक कवियत्रियों में बहुत ऊँचा है। इतना ही नहीं; वे हिन्दी के उन प्रमुख कवियों में से हैं जिनकी प्रतिभा सै हमारे साहित्य के एक ऐसे युग का निर्माण हो रहा है, जो आज के ही नहीं, भविष्य के सहृदयों को भी आप्यायित करता रहेगा। उन कवियों की पंक्ति में श्रीमती वर्मा का एक निश्चित स्थान है।

श्रीमती वर्मा हिन्दी-कविता के इस वर्तमान युग की वेदना-प्रधान कवियत्री हैं। उनकी काव्य-वेदना आध्यात्मिक है। उसमें आत्मा का परमात्मा के प्रति आकुल प्रणय-निवेदन है। कवि की आत्मा, मानो इस विश्व में बिछुड़ी हुई प्रेयसी की भाँति अपने प्रियतम का स्मरण करती

हैं। उसकी दृष्टि से, विश्व की सम्पूर्ण प्राकृतिक शोभा-सुपमा एक अनन्त अलौकिक चिरसुन्दर की छायामृत् है। इस प्रतिबिम्ब जगत् को देखकर कवि का हृदय, उसके सलौने बिम्ब के लिए ललक उठा है। मीरा ने जिस प्रकार उस परम पुरुष की उपासना सगुण रूप में की थी, उसी प्रकार महादेवी जी ने अपनी भावनाओं में उसकी आराधना निर्गुण रूप में की है। उसी एक का स्मरण, चिन्तन एवं उसके तादात्म्य होने की उत्कण्ठा, महादेवी जी की कविताओं के उपादान हैं। उनकी 'नीहार' में हम इस उपासना-भाव का परिचय विशेष रूप से पाते हैं। 'रश्मि' में इस भाव के साथ ही हमें उनके उपास्य का दार्शनिक 'दर्शन' भी मिलता है।

प्रस्तुत गीतिकाव्य 'नीरजा' में 'नीहार' का उपासना-भाव और भी सुस्पष्टता और तन्मयता से जाग्रत हो उठा है। इसमें अपने उपास्य के लिए केवल आत्मा की करुण अधीरता ही नहीं, अपितु, हृदय की विह्वल प्रसन्नता भी मिश्रित है। 'नीरजा' यदि अश्रुमुखी वेदना के कणों से भीगी हुई है तो साथ ही आत्मानन्द के मधु से मधुर भी है। मानो, कवि की वेदना, कवि की करुणा, अपने उपास्य के चरणस्पर्श से पूत होकर आकाश-गङ्गा की भाँति इस छायामय जग को सींच देने में ही अपनी सार्थकता समझ रही है।

'नीरजा' के गीतों में संगीत का बहुत सुन्दर प्रवाह है। हृदय के अमूर्त भावों को भी, नव-नव उपमाओं एवं रूपकों-द्वारा कवि ने बड़ी सुधरता से एक-एक सजीव स्वरूप प्रदान कर दिया है। भाषा सुन्दर,

कोमल, मधुर और सुस्निग्ध है। इसके अनेक गीत अपनी मार्मिकता के कारण सहज ही हृदयङ्गम हो जाते हैं।

श्रीमती वर्मा की काव्य शैली में अब तक अनेक परिवर्तन हो चुके हैं। और, यह परिवर्तन ही उनके विकास का सूचक है। अपने प्रारम्भिक कवि-जीवन में महादेवी जी ने सामाजिक और राष्ट्रीय कविताओं भी लिखी थीं, परन्तु उनकी प्रतिभा वहीं तक सीमित नहीं रही। फलतः 'नीहार' और 'रश्मि'-द्वारा ही वे अपने व्यापक कवि रूप में हिन्दी-संसार में प्रतिष्ठित हुईं। अब इस 'नीरजा' में उनकी प्रतिभा और भी भव्य रूप में प्रफुल्ल हुई है। इसमें भाषा, भाव और शैली, सभी दृष्टियों से, उनकी प्रतिभा का उत्कृष्ट विकास हुआ है। हमें पूर्ण आशा है कि उनकी यह नूतन कला-कृति उनके यश को हमारे साहित्य में और भी समुज्ज्वल कर देगी और साहित्य-रसिकों के अपार प्रेम की वस्तु बनेगी।

काशी,
आश्विन ६१।

कृष्णदास



प्रिय इन नयनों का अश्रु-नीर !

दुख से आविल सुख से पंकिल;

बुद्बुद् से स्वप्नों से फेनिल;

बहता है युग युग से अधीर !

नी र जा

जीवनपथ का दुर्गमतम तल;
अपनी गति से कर सजल सरल;
शीतल करता युग वृषित तीर !

इसमें उपजा यह नीरज सित;
कोमल कोमल लज्जित मीलित;
सौरभ सी लेकर मधुर पीर !

इसमें न पंक का चिह्न शेष,
इसमें न ठहरता सलिल-लेश,
इसको न जगाती मधुप-भीर !

तेरे करुणा-कण से विलसित;
हो तेरी चितवन से विकसित,
छू तेरी श्वासों का समीर !

२.

धीरे धीरे उतर क्षितिज से
आ वसन्त-रजनी !

तारकमय नव बेणीबन्धन;
शीश फूल कर शशि का नूतन;
रश्मिवलय सित घन-अवगुण्ठन;

मुक्ताहल अभिराम बिछा दे
चितवन से अपनी !

पुलकती आ वसन्त-रजनी !

तीन

नी र जा

मर्मर की सुमधुर नूपुरध्वनि;
अलि-गुञ्जित पद्मों की किंकिणि;
भर पदगति में अलस तरंगिणि;

तरल रजत की धार बहा दे
मृदु स्मित से सजनी !
विहँसती आ वसन्त-रजनी !

पुलकित स्वप्नों की रोमावलि;
कर में हो स्मृतियों की अब्जलि;
मलयानिल का चल दुकूल अलि !

घिर छाया सी श्याम, विश्व को
आ अभिसार बनी !
सकुचती आ वसन्त-रजनी !

सिहर सिहर उठता सरिता-उर;
खुल खुल पड़ते सुमन सुधा-भर;
मचल मचल आते पल फिर फिर;
सुन प्रिय की पदचाप हो गई
पुलकित यह अवननी !
सिहरती आ वसन्त-रजनी !

चार

३

पुलक पुलक उर, सिहर सिहर तन,
आज नयन आते क्यों भर भर ?

सकुच सलज खिलती शेफाली;
अलस मौलश्री डाली डाली;
बुनते नव प्रवाल कुञ्जों में;
रजत श्याम तारों से जाली;

शिथिल मधु-पवन, गिन-गिन मधु-कण,
हरसिंगार भरते हैं भर भर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

पाँच

नी र जा

पिक की मधुमय वंशी बोली;
नाच उठी लुन अलिनी भोली;
अरुण सजल पाटल बरसाता
तम पर मृदु पराग की रोली;

मृदुल अंक धर, दर्पण सा सर;
आज रही निशि दृग इन्दीवर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

आँसू बन बन तारक आते;
सुमन हृदय में सेज बिछाते;
कम्पित वानीरों के वन भी
रह रह करुण विहाग सुनाते;

निद्रा उन्मन, कर कर विचरण,
लौट रही सपने संचित कर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

जीवन जल-कण से निर्मित सा;
चाह इन्द्रधनु से चित्रित सा;
सजल मेघ सा धूमिल है जग
चिर नूतन सकरुण पुलकित सा;

तुम विद्युत् बन, आओ पाहुन !
मेरी पलकों में पग धर धर !
आज नयन आते क्यों भर भर !

छः

४

तुम्हें बाँध पाती सपने में !

तो चिरजीवन-प्यास बुझा

लेती उस छोटे क्षण अपने में !

पावस-घन सी उमड़ बिखरती;

शरद निशा सी नीरव धिरती;

धो लेती जग का विषाद

दुलते लघु आँसू-कण अपने में !

तुम्हें बाँध पाती सपने में !

सात

नी र जा

मधुर राग बन विश्व सुलाता;
सौरभ बन कण कण बस जाती;

भरती मैं संसृति का क्रन्दन
हँस जर्जर जीवन अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

सबकी सीमा बन, सागर सी;
हो असीम आलोक-लहर सी;

तारोंमय आकाश छिपा
रखती चंचल तारक अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

शाप मुझे बन जाता वर सा;
पतझर मधु का मास अजर सा;

रचती कितने स्वर्ग, एक
लघु प्राणों के स्पन्दन अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

साँसैं कहतीं अमर कहानी;
पल पल बनता अमिट निशानी;

प्रिय ! मैं लेती बाँध मुक्ति
सौ सौ लघुतम बन्धन अपने में !
तुम्हें बाँध पाती सपने में !

आठ

५

आज क्योँ तेरी वीणा मौन ?

शिथिल शिथिल तन थकित हुए कर;
स्पन्दन भी भूला जाता उर;

मधुर कसक सा आज हृदय में
आन समाया कौन ?

आज क्योँ तेरी वीणा मौन ?

नौ

नी र जा

मुकती आतीं पलकें निश्चल;
चित्रित निद्रित से तारक चल;
 सोता पारावार दृगों में
 भर भर लाया कौन ?
 आज क्यों तेरी वीणा मौन ?

बाहर घन-तम, भीतर दुख-तम;
नभ में विद्युत् तुम्हमें प्रियतम;
 जीवन पावस-रात बनाने
 सुधि बन छाया कौन ?
 आज क्यों तेरी वीणा मौन ?

६

शृङ्गार कर ले री सजनि

नव क्षीरनिधि की उर्मियों से

रजत भीने मेघ सित;

मृदु फेनमय मुक्तावली से

तैरते तारक अमित;

सखि ! सिहर उठती रश्मियों का

पहिन अवगुण्ठन अवनि !

ग्यारह

नी र जा

हिमस्नात कलियों पर जलाये
जुगनुओं ने दीप से;
ले मधुपराग समीर ने
वनपथ दिये हैं लीप से;

गाती कमल के कक्ष में
मधु-गीत मतवाली अलिनि !

तू स्वप्नसुमनों से सजा तन
विरह का उपहार ले;
अगणित युगों की प्यास का
अब नयन अंजन सार ले !

अलि ! मिलन-गीत बने मनोरम
नूपुरों की मदिर ध्वनि !

इस पुलिन के अणु आज हैं
भूली हुई पहचान से;
आते चले जाते निमिष
मनुहार से, वरदान से;

अज्ञात पथ, है दूर प्रिय चल
भीगती मधु की रजनि !

बारह

७

कौन तुम मेरे हृदय में ?

कौन मेरी कसक में नित

मधुरता भरता अलक्षित ?

कौन प्यासे लोचनों में

धुमड़ घिर भरता अपरिचित ?

स्वर्णस्वप्नों का चितेरा

नींद के सूने निलय में !

कौन तुम मेरे हृदय में ?

तेरह

नी र जा

अनुसरण निश्वास मेरे
कर रहे किसका निरन्तर ?
चूमने पदचिह्न किसके
लौटते यह श्वास फिर फिर ?

कौन बन्दी कर मुझे अब
बँध गया अपनी विजय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

एक करुण अभाव में चिर—
तृप्ति का संसार संचित;
एक लघु क्षण दे रहा
निर्वाण के वरदान शत शत;

पा लिया मैंने किसे इस
वेदना के मधुर क्रय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

गूँजता उर में न जाने
दूर के संगीत सा क्या !
आज खो निज को मुझे
खोया मिला, विपरीत सा क्या !

क्या नहा आई विरह-निशि
मिलनमधु-दिन के उदय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?

चौदह

नी र जा

तिमिरपारावार में

आलोकप्रतिमा है अकम्पित;

आज ज्वाला से बरसता

क्यों मधुर घनसार सुरभित ?

सुन रही हूँ एक ही

भंकार जीवन में प्रलय में ?

कौन तुम मेरे हृदय में ?

मूक सुख दुख कर रहे

मेरा नया शृङ्गार सा क्या ?

भूम गर्वित स्वर्ग देता—

नत धरा को प्यार सा क्या

आज पुलकित सृष्टि क्या

करने चली अभिसार लय में ?

कौन तुम मेरे हृदय में ?

८

ओ पागल संसार !

माँग न तू हे शीतल तममय !

जलने का उपहार !

करता दीपशिखा का चुम्बन;

पल में ज्वाला का उन्मीलन;

छूते ही करना होगा

जल मिटने का व्यापार !

ओ पागल संसार !

सोलह

दीपक जल देता प्रकाश भर;
दीपक को छू जल जाता घर;

जलने दे एकाकी मत आ
हो जावेगा चार !
ओ पागल संसार !

जलना ही प्रकाश उसमें सुख;
बुझना ही तम है तम में दुख:

तुझमें चिर दुख, मुझमें चिर सुख
कैसे होगा प्यार !
ओ पागल संसार !

शलभ अन्य की ज्वाला से मिल,
भुलस कहाँ हो पाया उज्ज्वल

कब कर पाया वह लघु तन से
नव आलोक-प्रसार !
ओ पागल संसार !

अपना जीवन-दीप मृदुलतर,
वर्ती कर निज स्नेहसिक्त उर,

फिर जो जल पावे हँस हँस कर
हो आभा साकार !
ओ पागल संसार !

९

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात !

वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास;
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात;

जीवन विरह का जलजात !

अठारह

आँसुओं का कोष उर, दृग अश्रु की टकसाल;
तरल जल-करण से बने घन सा क्षणिक मृदु गात !
जीवन विरह का जलजात !

अश्रु से मधुकरण लुटाता आ यहाँ मधुमास;
अश्रु ही की हाट बन आती करुण बरसात
जीवन विरह का जलजात !

काल इसको दे गया पल-आँसुओं का द्वार;
पूछता इसकी कथा निश्वास ही में बात !
जीवन विरह का जलजात !

जो तुम्हारा हो सके लीलाकमल यह आज;
खिल उठे निरुपम तुम्हारी देख स्मित का प्रात !
जीवन विरह का जलजात !

वीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ !

नींद थी मेरी अचल निस्पन्द कण कण में;
 प्रथम जागृति थी जगत के प्रथम स्पन्दन में;
 प्रलय में मेरा पता पदचिह्न जीवन में;
 शाप हूँ जो बन गया वरदान बन्धन में;

कूल भी हूँ कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ !

नयन में जिसके जलद वह तृषित चातक हूँ;
 शलभ जिसके प्राण में वह निठुर दीपक हूँ;
 फूल को उर में छिपाये विकल बुलबुल हूँ;
 एक हो कर दूर तन से छाँह वह चल हूँ;

दूर तुमसे हूँ अखण्ड सुहागिनी भी हूँ !

आग हूँ जिससे दुलकते बिन्दु हिमजल के;
 शून्य हूँ जिसको बिछे हैं पाँवड़े पल के;
 पुलक हूँ वह जो पला है कठिन प्रस्तर में;
 हूँ वही प्रतिबिम्ब जो आधार के उर में !

नील घन भी हूँ सुनहली दामिनी भी हूँ !

नाश भी हूँ मैं अनन्त विकास का क्रम भी;
 त्याग का दिन भी चरम आसक्ति का तम भी;
 तार भी आघात भी भङ्गार की गति भी;
 पात्र भी मधु भी मधुप भी मधुर विस्मृति भी;

अधर भी हूँ और स्मित की चाँदनी भी हूँ !

रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

श्यामल श्यामल कोमल कोमल,
लहराना सुरभित केश-पाश !

नभगङ्गा की रजतधार में,
धो आई क्या इन्हें रात ?
कम्पित हैं तेरे सजल अंग,
सिहरा सा तन हे सद्यस्नात !

भीगी अलकों के छोरों से
चूतीं बूँदें कर विविध लास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

सौरभभीना भीना गीला
लिपटा मृदु अंजन सा दुकूल;
चल अंचल से भर भर भरते
पथ में जुगनू के स्वर्ण-फूल;

दीपक से देता बार बार
तेरा उज्ज्वल चितवन-विलास !

रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

उच्छ्वसित वक्ष पर चंचल है
बक-पाँतों का अग्रविन्द-हार;
तेरी निश्वासें छू भू को
बन बन जातीं मलयज बयार;

केकी-रव की नूपुर-ध्वनि सुन
जगती जगती की मूक प्यास;

रूपसि तेरा घन केश-पाश !

इन स्निग्ध लटों से छा दे तन
पुलाकित अंकों में भर विशाल;
भुक रास्मित शीतल चुम्बन से
अंकित कर इसका मृदुल भाल;

दुलरा दे ना बहला दे ना
यह तेरा शिशु जग है उदास !

रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

तुम मुझमें प्रिय ! फिर परिचय क्या !

तारक में छवि प्राणों में स्मृति;

पलकों में नीरव पद की गति;

लघु उर में पुलकों की संस्मृति;

भर लाई हूँ तेरी चंचल

और कहुँ जग में संचय क्या !

तेरा मुख सहास अरुणोदय;
परछाई रजनी विषादमय;
यह जागृत वह नींद स्वप्नमय;

खेल खेल थक थक सोने दो
मैं समझूँगी सृष्टि प्रलय क्या !

तेरा अधर-विचुम्बित प्याला
तेरी ही स्मितमिश्रित हाला;
तेरा ही मानस मधुशाला;

फिर पृच्छें क्यों मेरे साक्षी !
देते हो मधुमय विषमय क्या ?

रोम रोम में नन्दन पुलकित;
साँस साँस में जीवन शत शत;
स्वप्न स्वप्न में विश्व अपरिचित;

मुझमें नित बनते मिटते प्रिय !
स्वर्ग मुझे क्या, निष्क्रिय लय क्या !

हारूँ तो खोऊँ अपनापन;
पाऊँ प्रियतम में निर्वासन;
जीत बनूँ तेरा ही बन्धन;

भर लाऊँ सीपी में सागर
प्रिय ! मेरी अब हार विजय क्या !

नी र जा .

चित्रित तू मैं हूँ रेखाक्रम;
मधुर राग तू मैं स्वरसंगम;
तू असीम मैं सीमा का भ्रम;

काया छाया में रहस्यमय !
प्रेयसि प्रियतम का अभिनय क्या !

१३

बताता जा रे अभिमानी ।

कण कण उर्वर करते लोचन;
स्पन्दन भर देता सूनापन;
जग का धन मेरा दुख निर्धन;

तेरे वैभव की भिक्षुक या
कहलाऊँ रानी !

बताता जा रे अभिमानी !

सत्ताईस

नी र जा

दीपक सा जलता अन्तस्तल;
संचित कर आँसू के बादल;
लिपटा है इससे प्रलयानिल;

क्या यह दीप जलेगा तुझसे
भर हिम का पानी ?

बताता जा रे अभिमानी !

चाहा था तुझमें मिटना भर;
दे डाला बनना मिट मिट कर,
यह अभिशाप दिया है या वर;

पहली मिलनकथा हूँ या मैं
चिर-विरह कहानी !

बताता जा रे अभिमानी !

मधुर मधुर मेरे दीपक जल !

युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल;
प्रियतम का पथ आलोकित कर !

सौरभ फैला विपुल धूप बन;
मृदुल मोम सा घुल रे मृदु तन;
दे प्रकाश का सिन्धु अपरिमित,
तेरे जीवन का अणु गल गल !

पुलक पुलक मेरे दीपक जल !

नी र जा

सारे शीतल कोमल नूतन,
माँग रहे तुझसे ज्वाला-कण;
विश्वशालभ सिर धुन कहता 'मैं
हाय न जल पाया तुझमें मिल' !

सिहर सिहर मेरे दीपक जल !

जलते नभ में देख असंख्यक;
स्नेहहीन नित कितने दीपक;
जलमय सागर का उर जलता;
विद्युत् ले घिरता है बादल !

विहँस विहँस मेरे दीपक जल !

द्रुम के अङ्ग हरित कोमलतम,
ज्वाला को करते हृदयङ्गम;
वसुधा के जड़ अन्तर में भी,
बन्दी है तापों की हलचल !

बिखर बिखर मेरे दीपक जल !

मेरी निश्वासों से द्रुततर,
सुभग न तू बुझने का भय कर;
मैं अरुचल की ओट किये हूँ,
अपनी मृदु पलकों से चञ्चल !

सहज सहज मेरे दीपक जल !

तीस

सीमा ही लघुता का बन्धन,
है अनादि तू मत घड़ियाँ गिन;
मैं दृग के अक्षय कोषों से—
तुझमें भरती हूँ आँसू-जल !
सजल सजल मेरे दीपक जल !

तम असीम तेरा प्रकाश चिर;
खेलेंगे नव खेल निरन्तर;
तम के अणु अणु में विद्युत् सा--
अमिट चित्र अंकित करता चल !
सरल सरल मेरे दीपक जल !

तू जल जल जितना होता क्षय;
वह समीप आता छलनामय;
मधुर मिलन में मिट जाना तू—
उसकी उज्ज्वल स्मित में धुल खिल !
मदिर मदिर मेरे दीपक जल !
प्रियतम का पथ आलोकित कर !

सुखर पिक हौले बोल !

हठीले हौले हौले बोल !

जाग लुटा देंगी मधु कलियाँ मधुप कहेंगे 'और';
चौक गिरेंगे पीले पल्लव अम्ब चलेंगे मोर;

समीरण मत्त उठेगा डोल !

हठीले हौले हौले बोल !

मर्मर की वशी में गूजेगा मधुञ्जतु का प्यार;
 ऋर जावेगा कम्पित तृण से लघु सपना सुकुमार;

एक लघु आँसू बन बेमोल !
 हठीले हैले हैले बोल ।

‘आता कौन’ नीड़ तज पूछेगा विहगों का रोर;
 दिग्बधुओं के घन-घूँघट के चञ्चल होंगे छोर;

पुलक से होंगे सजल कपोल !
 हठीले हैले हैले बोल !

प्रिय मेरा निशीथ नीरवता में आता चुपचाप;
 मेरे निमिषों से भी नीरव है उसकी पदचाप;

सुभग ! यह पल घड़ियाँ अनमोल !
 हठीले हैले हैले बोल !

वह सपना बन बन आता जागृति में जाता लौट;
 मेरे श्रवण आज बैठे हैं इन पलकों की ओट;

व्यर्थ मत कानों में मधु धोल !
 हठीले हैले हैले बोल !

भर पावे तो स्वरलहरी में भर वह करुण हिलोर;
 मेरा उर तज वह छिपने का ठौर न ढूँढ़े भोर;

उसे बाँधूँ फिर पलकें खोल !
 हठीले हैले हैले बोल !

१६

पथ देख बिता दी रैन
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

तम ने धोया नभपंथ
सुवासित हिमजल से;
सूने आँगन में दीप
जला दिये झिलमिल से;

आ प्रात बुझा गया कौन

अपरिचित, जानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

चौतीस

धर कनल-थाल में मेघ
सुनहला पाटल सा,
कर बालारुण का कलश
विहग-रत्न मङ्गल सा,

आया प्रिय-पथ से प्रात—

सुनाई कहानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

नव इन्द्रधनुष सा चीर
महावर अंजन ले;
अलि-गुञ्जित मीलित पंकज—
—नूपुर रुनभुन ले;

फिर आई मनाने साँभ

मैं बेसुध मानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

इन श्वासों को इतिहास
आँकते युग बीते;
रोमों में भर भर पुलक
लौटते पल रीते;

यह दुलक रही है याद

नयन से पानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

नी र जा

अलि कुहरा सा नभ, विश्व
मिटे बुद्बुद्-जल सा;
यह दुख का राज्य अनन्त
रहेगा निश्चल सा;

हूँ प्रिय की अमर सुहागिनि
पथ की निशानी नहीं !
मैं प्रिय पहचानी नहीं !

छत्तीस

१७

मेरे हँसते अधर नहीं जग—
की आँसू-लड़ियाँ देखो !
मेरे गीले पलक छुओ मत
मुझ्माई कलियाँ देखो !

सैंतीस

नी र जा

हँस देता नव इन्द्रधनुष की स्मित में घन मिटता मिटता;
रँग जाता है विश्व राग से निष्फल दिन ढलता ढलता;
कर जाता संसार सुरभिमय एक सुमन भरता भरता;
भर जाता आलोक तिमिर में लघु दीपक बुझता बुझता
मिटनेवालों की हे निष्ठुर !

बेसुध रँगरलियाँ देखो !

मेरे गीले पलक छुओ मत

मुर्झाई कलियाँ देखो !

गल जाता लघु बीज असख्यक नश्वर बीज बनाने को;
तजता पल्लव वृन्त पतन के हेतु नये विकसाने को;
मिटता लघु पल प्रिय देखो कितने युग कल्प मिटाने को !
भूल गया जग भूल विपुल भूलोंमय सृष्टि रचाने को;

मेरे बन्धन आज नहीं प्रिय,

संस्मृति की कड़ियाँ देखो !

मेरे गीले पलक छुओ मत

मुर्झाई कलियाँ देखो !

श्वासें कहतीं 'आता प्रिय' निश्वास बताते वह जाता;
आँखों ने समझा अनजाना उर कहता चिर यह नाता;
सुधि से सुन 'वह स्वप्न सजीला क्षण क्षण नूतन बन आता';
दुख उलफन में राह न पाता सुख दृगजल में बह जाता;

मुझमें हो तो आज तुम्हीं 'मैं'

बन दुख की घड़ियाँ देखो !

मेरे गीले पलक छुओ मत

बिखरी पंखुरियाँ देखो !

इस जादूगरनी वीणा पर
गा लेने दो क्षण भर गायक !

पल भर ही गाया चातक ने
रोम रोम में प्यास प्यास भर !
काँप उठा आकुल सा अग जग,
सिहर गया तारोंमय अम्बर;

भर आया घन का उर गायक !
गा लेने दो क्षण भर गायक !

नी र जा

क्षण भर ही गाया फूलों ने
दृग में जल अधरों में स्मित धर !
लघु उर के अनन्त सौरभ से
कर डाला यह पथ नन्दन चिर;

पाया चिर जीवन भर गायक !

गा लेने दो क्षण भर गायक !

एक निमिष गाया दीपक ने
ज्वाला का हँस आलिङ्गन कर !
उस लघु पल से गर्वित है तू
लघु रजकण आभा का सागर,

दिव उस पर न्यौछावर गायक !

गा लेने दो क्षण भर गायक !

एक घड़ी गा लूँ प्रिय मैं भी
मधुर वेदना से भर अन्तर !
दुख हो सुखमय सुख हो दुखमय,
उपल बनें पुलकित से निर्भर;

मरु हो जावे उर्वर गायक !

गा लेने दो क्षण भर गायक !

चालीस

१९

घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय !

जलधि-मानस से नव जन्म पा
सुभग तेरे ही दृग-व्योम में;

सजल श्यामल मन्थर मूक सा

तरल अश्रु विनिर्मित गात ले;

नित धिरूँ भर भर मिटूँ प्रिय !

घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय !

इकतालीस

आ मेरी चिर मिलन-यामिनी !

तममयि ! धिर आ धीरे धीरे,
 आज न सज अलकों में हीरे;
 चौका दें जग श्वास न सीरे;

हौले भरें शिथिल कवरी में—

गूँथे हरशृङ्गार कामिनी !

हौले डाल पराग-बिछौने;
आज न दे कलियों को रोने;
दे चिर चंचल लहरें सोने,

जगा न निद्रित विश्व ढालने
विधु-प्याले से मधुर चाँदनी !

परिमल भर लावे नीरव घन;
गले न मृदु उर आँसू बन बन;
हो न करुण पी पी का क्रन्दन;

अलि, जुगनू के छिन्न हार को
पहिन न बिहँसे चपल दामिनी !

अपलक हैं अलसाये लोचन
मुक्ति बन गए मेरे बन्धन;
है अनन्त अब मेरा लघु क्षण;

रजनि ! न मेरी उरकम्पन से
आज बजेगी विरह-रागिनी !

तम में हो चल छाया का क्षय;
सीमित की असीम में चिर लय;
एक हार में हों शत शत जय.

सजनि ! विश्व का कण कण मुझको
आज कहेगा चिर सुहागिनी !

जग ओ मुरली की मतवाली !

दुर्गमपथ हो ब्रज की गलियाँ;
 शूलों में मधुवन की कलियाँ;
 यमुना हो दृग के जलकण में;
 वंशी-ध्वनि उर की कम्पन में;

जो तू करुणा का मंगलघट ले

बन आवे गोरसवाली !

जग ओ मुरली की मतवाली !

चरणों पर नवनिधियाँ खेलीं;
पर तूने हँस पहनी सेली;
चिर जाग्रत थी तू दीवानी;
प्रिय की भिक्षुक दुख की रानी;

खारे दृग-जल से सींच सींच

प्रिय की सनेहवेली पाली !
जग ओ मुरली की मतवाली !

कंचन के प्याले का फेनिल;
नीलम सा तम सा हालाहल;
छू तूने कर डाला उज्ज्वल
प्रिय के पदपद्मों का मधुजल;

फिर अपने मृदु कर से छूकर

मधु कर जा यह विष की प्याली !
जग ओ मुरली की मतवाली !

मरुशेष हुआ यह मानससर
गतिहीन मौन दृग के निर्भर;
इस शीत निशा का अन्त नहीं
आता पतम्भार वसन्त नहीं;

गा तेरे ही पंचम स्वर से

कुसुमित हो यह डाली डाली ।
जग ओ मुरली की मतवाली !

कैसे सँदेश प्रिय पहुँचाती !

दृगजल की सित मसि है अक्षय,
मसि प्याली, भरते तारक द्वय;
पल पल के उड़ते पृष्ठों पर,
सुधि से लिख श्वासों के अक्षर;

मैं अपने ही बेसुध पन में
लिखती हूँ कुछ, कुछ लिख जाती !

छायापथ में छाया से चल,
 कितने आते जाते प्रतिपल;
 लगते उनके विभ्रम इंगित,
 चरण में रहस्य चरण में परिचित;

मिलता न दूत वह चिर परिचित;
 जिसको उर का धन दे आती ।

अज्ञातपुलिन से, उज्ज्वलतर,
 किरणें प्रवाल तरणी में भर;
 तम के नीलम-कूलों पर नित,
 जो ले आती ऊषा सस्मित;

वह मेरी करुण कहानी में
 मुसकानें अंकित कर जाती !

सज केशरपट तारक बेदी,
 दृग-अंजन मृदु पद में मेंहदी
 आती भर मदिरा से गगरी;
 सन्ध्या अनुराग सुहागभरी;

मेरे विषाद में वह अपने
 मधुरस की बूँदें छलकाती !

डाले नव घन का अवगुण्ठन,
 दृग-तारक में सकरुण चितवन
 पदध्वनि से सपने जाग्रत कर,
 श्वासों से फैला मूक तिमिर,

निशि अभिसारों में आँसू से
 मेरी मनुहारें धो जाती !

२३

में बनी मधुमास आली !

आज मधुर विषाद की धिर करुण आई यामिनी,
बरस सुधि के इन्दु से छिटकी पुलक की चाँदनी;

उमड़ आई री दृगों में
सजनि कालिन्दी निराली !

अड़तालीस

रजत-स्वप्नों में उदित अपलक विरल तारावली;
जाग सुख-पिक ने अचानक मदिर पंचम तान ली;

वह चली निश्वास की मृदु
वात मलय-निकुञ्ज-पाली !

सजल रोमों में बिछे हैं पाँवड़े मधुस्नात से;
आज जीवन के निमिष भी दूत हैं अज्ञात से;

क्या न अब प्रिय की बजेगी
मुरलिका मधु-रागवाली !

मैं बनी मधुमास आली !

में मतवाली इधर, उधर प्रिय मेरा अलबेला सा है !

मेरी आँखों में ढलकर
 छाँबि उसकी मोती बन आई;
 उसके घनप्यालों में है
 विद्युत् सी मेरी परछाई;
 नभ में उसके दीप, स्तह
 जलता है पर मेरा उनमें;
 मेर हैं यह प्राण, कहानी
 पर उसकी हर कम्पन में;

यहाँ स्वप्न की हाट वहाँ अलि छाया का मेला सा है ।

उसकी-स्मित लुटती रहती
कलियों में मेरे मधुवन की;
उसकी मधुशाला में बिकती
मादकता मेरे मन की;
मेरा दुख का राज्य मधुर
उसकी सुधि के पल रखवाले;
उसका सुख का कोष वेदना—
के मैंने ताले डाले;

वह सौरभ का सिन्धु मधुर जीवन मधु की बेला सा है !

मुझे न जाना आल ! उसने
जाना इन आँखों का पानी;
मैं ने देखा उसे नहीं
पदध्वनि है केवल पहचानी;
मेरे मानस में उसकी स्मृति
भी तो विस्मृति बन आतां;
उसके नीरव मन्दिर में
काया भी छाया हो जाती;
क्यां यह निर्मम खेल सजनि ! उसने मुझसे खेला सा है ।

तुमको क्या देखूँ चिर नूतन !

जिसके काले तिल में बिम्बित,
हो जाते लघु तृण औ' अम्बर;
निश्चलता में स्वप्नों से जग,
चंचल हो भर देता सागर !

जिस बिन सब आकार-हीन तम;
देख न पाई मैं यह लोचन !

बावन

तुमको पहचानूँ क्या सुंदर !
जो मेरे सुख दुख से उर्वर
जिसको मैं अपना कह गर्वित;
करता सूनेपन को, पल में,
जड़ का नव कम्पन में कुसुमित;
जो मेरी श्वासों का उद्गम,
जान न पाई अपना ही उर !

तुमको क्या बाँधूँ छायातन !
तरां विरह-निशा जिसका दिन,
जो स्वच्छन्द मुझे है बन्धन;
अणुमय हो बनता जो जगमय,
उड़ते रहना जिसका स्पन्दन;
जीवन जिससे मेरा संगम,
बाँध न पाई अपना चल मन !

तुमको क्या रोऊँ चिर चंचल !
जिसका मिट जाना प्रलयङ्कर,
बनना ही ससृति का अंकुर;
मेरी पलकों का द्रुत कम्पन,
है जिसका उत्थान पतन चिर;
मुझसे जो नव और चिरन्तन,
रोक न पाई मैं वह लघु पल !

२६

प्रिय गया है लौट रात !

सजल धवल अलस चरण,
मूक मदिर मधुर करुण,
चाँदनी है अश्रुस्नात !

चौवन

सौरभ-मद ढाल शिथिल,
मृदु बिछा प्रवाल वकुल,
सो गई सी चपल वात !

युग युग जल मूक विकल,
पुलकित अब स्नेहतरल,
दीपक है स्वप्नसात !

किसके पदचिह्न विमल,
तारका में अमिट विरल,
गिन रहे हैं नीर-जात !

किसकी पदचाप चकित,
जग उठे हैं जन्म अमित.
श्वास श्वास में प्रभात !

२७

एक बार आओ इस पथ से

मलय-अनिल बन हे चिरचंचल !

अधरों पर स्मित सी किरणो ले

श्रमकण से चंचित सकरुण मुख,

अलसाई है विरह-यामिनी

पथ में लेकर सपने सुख दुख,

आज सुला दो चिर निद्रा में,

सुरभित कर इसके चल कुन्तल !

छापन

मृदु नभ के उर में छाले से
निष्ठुर प्रहरी से पल पल के,
शलभ न जिन पर मँडरात प्रिय !
भस्म न बनते जा जल जल के,
आज बुभा जाओ अम्बर के
स्नेहहीन यह दीपक भिलमिल !

तम हो तुम हो और विश्व में
मेरा चिर परिचित सूनापन,
मेरी छाया हो मुझमें लय
छाया में ससृति का स्पन्दन,
मैं पाऊँ सौरभ सा जीवन
तेरी निश्वासों में घुल मिल !

क्यों जग कहता मतवाली ?

क्यों न शलभ पर लुट लुट जाऊँ,
 झुलसे पङ्खों को चुन लाऊँ,
 उन पर दांपशिखा अँकवाऊँ,

अलि ! मैंने जलने ही में जब
 जावन की निधि पा ली !

क्या अनुनय में मनुहारों में,
क्या आँसू में उद्गारों में,
आवाहन में अभिसारों में,

जब मैंने अपने प्राणों में
प्रिय की छाँह छिपा ली !

भावे क्या अलि ! अस्थिर मधुदिन,
दो दिन का मृदु मधुकर-गुञ्जन
पल भर का यह मधु-मद-वितरण,

चिर वसन्त हे मेरे इस
पतझर की डाली डाली !

जो न हृदय अपना विंधवाऊँ,
निश्वासों क तार बनाऊँ,
तो कह किसका हार बनाऊँ !

तारों न वह दृष्टि, कली न
उनकी हँसी चुरा ली !

मैं ने कब देखी मधुशाला ?
कब माँगा मरकत का प्याला ?
कब छलकी विद्रुम सी हाला ?
मैंने तो उनकी स्मित में

केवल आँखें धो डालीं !

क्यों जग कहता मतवाला ?

जाने किसकी स्मित रूम भूम,

जाता कलियों को चूम चूम !

उनके लघु उर में जग, अर्लासित,

सौरभ-शशु चल देता विस्मित;

हौले मृदु पद से डोल डोल,

मृदु पखुरियों के द्वार खोल !

कुम्हला जाती कलिका अजान;

वह सुरभित करता विश्व, घूम !

जाने किसकी छवि रूम भूम,
जाती मेघों के चूम चूम !

वे मन्थर जल के बिन्दु चकित,
नभ को तज दुल पड़ते विचलित !
विद्युत क दीपक ले चंचल,
सागर सा गर्जन कर निष्फल,
घन थकते उनको खाज खोज
फिर मिट जाते उ्यों विफल धूम !

जाने किसकी ध्वनि रूम भूम,
जाती अचलों के चूम चूम !

उनके जड़ जीवन में संचित,
सपन बनते निर्भर पुलकित;
प्रस्तर के अणु घुल घुल अधीर,
उसमें भरते नव स्नेह-नीर !
वह बह चलता अज्ञात देश,
प्यासां में भरता प्राण, भूम !

जाने किसकी सुधि रूम भूम,
जाती पलकों के चूम चूम !

उरकोषों के मोती अविदित,
बन पिघल पिघल कर तरल रजत,
भरते आँखों में बार बार
रोके न आज रुकते अपार;
मिटते ही जाते हैं प्रतिपल
इन धूलिकणों के चरण चूम !

तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

कम्पित कम्पित,
पुलकित पुलकित,
परछाई मेरी से चित्रित,

रहने दो रज का मंजु मुकुर,
इस विन शृंगार-सदन सूना !

तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

बासठ

सपने औं स्मित,
 जिसमें अंकित,
 सुख दुख के डोरों से निर्मित;
 अपनेपन की अवगुण्डन विन
 मेरा अपलक आनन सूना !
 तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !
 जिनका चुम्बन,
 चौकाता मन;
 बेसुधपन में भरता जीवन,
 भूलों के शूलों विन नूतन,
 उर का कुसुमित उपवन सूना !
 तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !
 दृग-पुलिनों पर,
 हिम से मृदुतर,
 करुणा की लहरों में बह कर,
 जो आ जाते मोती, उन विन,
 नवनिधियोंमय जीवन सूना !
 तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !
 जिसका रोदन,
 जिसकी किलकन,
 मुखरित कर देते सूनापन,
 इन मिलन-विरह-शिशुओं के विन
 विस्तृत जग का आँगन सूना !
 तेरी सुधि विन क्षण क्षण सूना !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

उसमें हँस दी मेरी छाया;
मुझमें रो दी ममता माया;
अश्रुहास ने विश्व सजाया;

रहे खेलते आँखमिचौनी
प्रिय ! जिसके परदे में 'मैं' 'तुम' ?

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

अपने दो आकार बनाने;
दानों का अभिसार दिखाने;
भूलों का संसार बसाने;

जो झिलमिल झिलमिल सा तुमने
हँस हँस दे डाला था निरुपम !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

कैसा पतझर कैसा सावन;
कैसी मिलन विरह की उलझन;
कैसा पल घड़ियोंमय जीवन;

कैसे निशिदिन कैसे सुख-दुख
आज विश्व में तुम हो या तम !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

किसमें देख सँवारूँ कुन्तल;
अङ्गराग पुलकों का मल मल;
स्त्रियों से आँजूँ पलकें चल;

किस पर रीझूँ किससे रूठूँ
भर लूँ किस छवि से अन्तरतम !

टूट गया वह दर्पण निर्मम !

सी र जा

आज कहाँ मेरा अपनापन !
तेरे छिपने का अवगुण्ठन;
मेरा बन्धन तेरा साधन;

तुम मुझमें अपना सुख देखो
मैं तुममें अपना दुख प्रियतम !
दूट गया वह दपेण निर्मम !

३२

ओ विभावरी !

चाँदनी का अंगराग;

माँग में सजा पराग;

रश्मिदार बाँध मृदुल

चिकुर-भार री !

ओ विभावरी !

सड़सठ

नी र जा

अनिल घूम देश देश;
लाया प्रिय का सँदेश,
मोतियों के सुमन-कोष,
वार वार री !
ओ विभावरी !

लेकर मृदु ऊर्मबीन;
कुछ मधुर करुण नवीन;
प्रिय की पदचाप-मदिर
गा मलार री !
ओ विभावरी !

बहने दे तिमिर भार,
बुझने दे यह अंगार,
पहिन सुरभि का दुकूल
वकुलहार री !
ओ विभावरी !

प्रिय ! जिसने दुख पाला हो !

जिन प्राणों से लिपटी हो
 पीड़ा सुरभित चन्दन सी;
 तूफानों की छाया हो
 जिसको प्रिय-श्रालिङ्गन सी;
 जिसको जीवन की हारें
 हों जय के अभिनन्दन सी;

वर दो यह मेरा आँसू
 उसके उर की माला हो !

नी र जा

जो उजियाला देता हो
जल जल अपनी ज्वाला में;
अपना सुख बाँट दिया हो
जिसने इस मधुशाला में,
हँस हालाहल ढाला हो
अपनी मधु सी हाला में;
मेरी साधों से निर्मित
उन अधरों का प्याला हो !

३४

दीपक में पतङ्ग जलता क्यों ?

प्रिय की आभा में जीता फिर
दूरी का अभिनय करता क्यों ?
पागल रे पतङ्ग जलता क्यों ?

इकहत्तर

न्य र जा

उजियाला जिसका दीपक में,
तुझमें भी है वह चिनगारी;

अपनी ज्वाला देख, अन्य की
ज्वाला पर इतनी ममता क्यों ?

गिरता कब दीपक, दीपक में,
तारक में तारक कब घुलता;

तेरा ही उन्माद शिखा में
जलता है फिर आकुलता क्यों ?

पाता जड़ जीवन, जीवन से,
तम दिन में मिल दिन हो जाता;

पर जीवन के, आभा के करण,
एक सदा, भ्रम में फिरता क्यों ?

जो तू जलने को पागल हो,
आँसू का जल स्नेह बनेगा;

धूमहीन निस्पन्द जगत में
जल बुझ, यह क्रन्दन करता क्यों ?
दीपक में पतुङ्ग जलता क्यों ?

आँसू का मोल न लूँगी मैं !

यह क्षण क्या ? द्रुत मेरा स्पन्दन;

यह रज क्या ? नव मेरा मृदु तन;

यह जग क्या ? लघु मेरा दर्पण;

प्रिय तुम क्या ? चिर मेरे जीवन;

मेरे सब सब में प्रिय तुम,

किससे व्यापार करूँगी मैं ?

आँसू का मोल न लूँगी मैं !

ना र जा

निर्जल हो जाने दो बादल;
मधु से रीते सुमनों के दल;
करुणा विन जगती का अञ्चल;
मधुर व्यथा विन जीवन के पल;

मेरे दृग में अक्षय जल,
रहने दो विश्व भरूँगी मैं !
आँसू का मोल न लूँगी मैं !

मिथ्या प्रिय मेरा अवगुण्ठन !
पाप शाप, मेरा भोलापन !
चरम सत्य, यह सुधि का दंशन;
अन्तहीन, मेरा करुणा-करण;

युग युग के बंधन को प्रिय !
पल में हँस 'मुक्ति' करूँगी मैं !
आँसू का मोल न लूँगी मैं !

चौहत्तर

कमलदल पर किरण अंकित

चित्र हूँ मैं क्या चितरे ?

बादलों की प्यालियों भर
चाँदनी के सार से;
तूलिका कर इन्द्रधनु
तुमने रँगा उर प्यार से;

काल के लघु अश्रु से
धुल जायँगे क्या रङ्ग मेरे ?

ना र जा

तड़ित् सुधि में, वेदना में
करुण पावस-रात भी;
आँक स्वप्नों में दिया
तुमने वसन्त-प्रभात भी;

क्या शिरीष-प्रसून से
कुम्हलायेंगे यह साज मेरे ?

है युगों का मूक परिचय
देश से इस राह से;
हो गई सुरभित यहाँ की
रेणु मेरी चाह से;

नाश के निश्वास से
मिट पायेंगे क्या चिह्न मेरे ?

नाच उठते निमिष पल
मेरे चरण की चाप से;
नाप ली निःसीमता
मैंने दृगों के माप से;

मृत्यु के उर में समा क्या
पायेंगे अब प्राण मेरे ?

छिहत्तर

नां र जा

आँक दी जग के हृदय में
अमिट मेरी प्यास क्यों ?
अभ्रमय अवसाद क्यों यह
पुलककम्पन-लास क्यों ?

मैं मिटूँगी क्या अमर
हो जायेंगे उपहार मेरे ?

सतहत्तर

प्रिय ! मैं हूँ एक पहेली भी !

जितना मधु जितना मधुर हास,
जितना मद तेरी चितवन में;
जितना क्रन्दन जितना विषाद,
जितना विष जग के स्पन्दन में;

पी पी मैं चिर दुखप्यास बनी
सुखसरिता की रँगरेली भी !

नी र जा

मेरे प्रतिरोमों से अविरत,
भ्रूते हैं निर्भर और आग;
करतों विरक्ति आसक्ति प्यार,
मेरे श्वासों में जाग जाग;

प्रिय मैं सीमा की गोद पत्नी
पर हूँ असीम से खेली भी !

उन्नार्स

क्या नई मेरी कहानी !

विश्व का कण कण सुनाता
प्रिय वही गाथा पुरानी !

सजल बादल का हृदय-कण,
चू पड़ा जब पिघल भू पर;
पी गया उसको अपरिचित
तृषित दरका पङ्क का उर;

मिट गई उससे तड़ित् सी
हाय वारिद की निशानी !

करुण वह मेरी कहानी !

जन्म से मृदु कंज-उर में
नित्य पाकर प्यार लालन;
अनिल के चल पङ्क पर फिर
उड़ गया जब गन्ध उन्मन;

बन गया तब सर अपरिचित
हो गई कलिका बिरानी !
निटुर वह मेरी कहानी !

चीर गिरि का कठिन मानस
बह गया जो स्नेहनिर्भर;
ले लिया उसके अतिथि कह,
जलधि ने जब अङ्क में भर,

वह सुधा सा मधुर पल में
हो गया तब चार पानी !
अमिट वह मेरी कहानी !

इक्यासी

मधुवेला है आज

अरे तू जीवन-पाटल फूल !

**आई दुख की रात मोतियों की देने जयमाल;
सुख की मन्द वतास खोलती पलकें दे दे ताल;**

डर मत रे सुकुमार !

तुझे दुलराने आये शूल !

अरे तू जीवन-पाटल फूल !

बयासी

नी र जा

भिक्षुक सा यह विश्व खड़ा है पाने करुणा प्यार;
हँस उठ रे नादान खोल दे पंखुरियों के द्वार;

रीते कर ले कोष

नहीं कल सेना होगा धूल !

अरे तू जीवन-पाटल फूल !

· तिरासी

यह पतझर मधुवन भी हो !

दुःख सा तुषार सेता हो
 बेसुध सा जब उपवन में;
 उस पर छलका देती हो
 वनश्री मधु भर चितवन में;
 शूलों का दंशन भी हो

कलियों का चुम्बन भी हो ।

सूखे पल्लव फिरते हों
कहने जब करुण कहानी,
मारुत परिमल का आसन
नभ दे नयनों का पानी;

जब अलिकुल का क्रन्दन हो
पिक का कलकूजन भी हो ।

जब संध्या ने आँसू में
अंजन से हो मसि घोली;
तब प्राची के अंचल में
हो स्मित से चर्चित रोली;

काली अपलक रजनी में
दिन का उन्मीलन भी हो !

जब पलकें गढ़ लेती हों
स्वाती के जल विन मोती;
अधरों पर स्मित की रेखा
हो आकर उनको धोती;

निर्मम निदाघ में मेरे
करुणा का नव घन भी हो

मुस्काता संकेतभरा नभ
अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

विद्युत् के चल स्वर्णपाश में बँध हँस देता रोता जलधर,
अपने मृदु मानस की ज्वाला गीतों से नहलाता सागर;
दिन निशि को, देती निशि दिन को
कनक-रजत के मधु-प्याले हैं !
अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

नी र जा

माती बिखरातीं नूपुर के छिप तारक-परियों नर्तन कर;
हिमकरण पर आता जाता मलयानिल परिमल से अञ्जलि भर;

भ्रान्त पथिक से फिर फिर आते

विस्मित पल क्षण मतवाले हैं !

अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

सघन वेदना के तम में, सुधि जाती सुख सोने के कण भर;
सुरधनु नव रचतीं निश्वासों, स्मित का इन भीगे अधरों पर;

आज आँसुओं के केषों पर

स्वप्न बने पहरवाले हैं !

अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

नयन श्रवणमय श्रवण नयनमय आज हो रहे कैसी उलफन !
रोम रोम में होता री सखि एक नया उर का सा स्पन्दन !

पुलकों से भर फूल बन गये

जितने प्राणों के झाले हैं !

अलि क्या प्रिय आनेवाले हैं ?

सत्तासी

४२

भरते नित लोचन मेरे हों !

जलती जो युग युग से उज्ज्वल;

आभा से रच रच मुक्ताहल;

वह तारक-माला उनकी,

चल विद्युत् के कङ्कण मेरे हों !

भरते निज लोचन मेरे हों !

अट्टासी

ले ले तरल रजत औँ कंचन,
निशिदिन ने लीपा जो आँगन;

बह सुषमामय नभ उनका,
पल पल मिटते नव घन मेरे हों !
भरते नित लोचन मेरे हों !

पद्मराग-कलियों से विकसित;
नीलम के अलियों से मुखरित:

चिर सुरभित नन्दन उनका,
यह अश्रु-भार-नत तृण मेरे हों !
भरते नित लोचन मेरे हों !

तम सा नीरव नभ सा विस्तृत:
हास रुदन से दूर अपरिचित;

वह सूनापन हो उनका,
यह सुखदुःखमय स्पन्दन मेरे हों !
भरते नित लोचन मेरे हों !

जिसमें कसक न सुधि का दंशान,
प्रिय में मिट जाते के साधन,

वे निर्वाण—मुक्ति उनके,
जीवन के शत बन्धन मेरे हों !
भरते नित लोचन मेरे हों !

नी र जा

बुद्बुद् में आवत्ते अपरिमित;
कण में शत जीवन परिवर्तित;

हों चिर सृष्टि प्रलय उनके,
बनने मिटने के क्षण मेरे हों
भरते नित लोचन मेरे हों !

सस्मित पुलकित नित परिमलमय;
इन्द्रधनुष सा नवरङ्गमय;

अग जग उनका कण कण उनका,
पलभर वे निर्मम हों ।
भरते निज लाचन मेरे हों !

४३

लाये कौन सँदेश नये घन !

अम्बर गर्वित,
हो आया नत,

चिर निस्पन्द हृदय में उसके उमड़े री पुलकों के सावन !

लाये कौन सँदेश नये घन !

इक्यानबे

नी र जा

चौकी निद्रित,
रजनी अलसित,
श्यामल पुलकित कम्पित कर में दमक उठे विद्युत् के कंकण !
लाये कौन सँदेश नये घन !

दिशि का चंचल,
परिमल-अंचल,
छिन्नहार से बिखर पड़े सखि सखि ! जुगुनू के लघु हीरक के कण !
लाय कौन सँदेश नये घन !

जड़ जग स्पन्दित,
निश्चल कम्पित,
फूट पड़े अबनी के संचित सपने मृदुतम अंकुर बन बन !
लाये कौन सँदेश नये घन !

रोया चातक,
सकुचाया पिक,
मत्त मयूरी ने सूने में झड़ियों का दुहराया नर्तन !
लाये कौन सँदेश नये घन !

सुख दुख से भर,
आया लघु उर,
मोती से उजले जलकण से छाये मेरे विस्मित लोचन !
लाय कौन सँदेश नये घन !

बानवे

कहता जग दुख को प्यार न कर !

अनबीधे मोती यह दृग के,
बँध पाये बन्धन में किसके ?

पल पल बनते पल पल मिटते,
तू निष्फल गुथ गुथ हार न कर !

कहता जग दुख को प्यार न कर !

नी र जा

किसने निज को खोकर पाया ?

किसने पहचानी वह छाया ?

तू भ्रम वह तम तेरा प्रियतम

आ सूने में अभिसार न कर !

कहता जग दुख को प्यार न कर !

यह मधुर कसक तेरे उर की,

कंचन की और न हीरक की;

मेरी स्मित से इसका विनिमय

कर ले या चल व्यापार न कर !

कहता जग दुख को प्यार न कर !

दर्पणमय है अणु अणु मेरा;

प्रतिबिम्बित रोम रोम तेरा;

अपनी प्रतिछाया से भोले !

इतनी अनुनय मनुहार न कर !

कहता जग दुख को प्यार न कर !

सुखमधु में क्या दुख का मिश्रण !

दुखविष में क्या सुख-मिश्री-करण !

जाना कलियों के देश तुझे

तो शूलों से शृंगार न कर !

कहता जग दुख को प्यार न कर !

चौरानवे

४५

मत अरुण घूँघट खोल री !

वृन्त बिन नभ में खिले जो;

अभ्रु बरसाते हँसे जो;

तारकों के वे सुमन

मत चयन कर अनमोल री !

पंचानबे

नी र जा

तरल माने से धुलीं यह;
पञ्चरागों से सर्जी यह;
उलभ अलकें जायँगी
मत अनिलपथ में डाल री !

निशि गई मोती सजाकर;
हाट फूलों में लगाकर;
लाज से गल जायँगे
मत पूछ इनसे मोल री !

स्वर्ण-कुमकुम में बसा कर,
है रँगी नव मेघ चूनर,
बिछल मत धुल जायगी
इन लहरियों में लाल री !

चाँदनी की सित सुधा भर,
बाँटता इनसे सुधाकर,
मत कली की प्यालियों में
लाल मदिरा बोल री !

पलक सीपें नींद का जल,
स्वप्नमुक्ता रच रहे, मिल;
हैं न विनिमय के लिए
स्मित से इन्हें मत तोल री !

खेल सुख दुख से चपल थक,
सो गया जगशिशु अचानक;
जाग मचलेगा न तू
कल खग पिकों में बोल री !

द्वियानवे

४६

जग करुण करुण, मैं मधुर मधुर !

दोनों मिल कर देते रजकण,
चिर करुण मधुर सुन्दर सुन्दर !

जग पतम्बर का नीरव रसाल,
पहने हिमजल की अश्रमाल;
मैं पिक बन गाती डाल डाल,

सुन फूट फूट उठते पल पल,
सुख-दुख-मञ्जरियों के अङ्कुर !

सत्तानबे

नी र जा

विस्मृति-शशि के हिमकिरण-बाण,
करते जीवन-सर मूकप्राण;
वन मलयपवन चढ़ रश्मियान,

मैं आती ले मधु का सँदेश.

भरने नीरव उर में मर्मर !

यह नियति-तिमिर-सागर अपार,
बुझते जिसमें तारक-अँगार;
मैं प्रथम रश्मि सी कर श्रृँगार,

आ अपनी छवि से ज्योतिर्मय,

कर देती उसकी लहर लहर !

युग से थी प्रिय की मूक बीन,
थे तार शिथिल कम्पनविहीन;
मैंने द्रुत उनकी नींद छीन,

सूनापन कर डाला क्षण में

नव झङ्कारों से करुणामधुर !
जग करुण करुण, मैं मधुर मधुर !

अट्टानवे

प्राणपिक प्रिय-नाम रे कह !

मैं मिटी निस्सीम प्रिय में;
वह गया बँध लघु हृदय में;

अब विरह की रात को तू
चिर मिलन का प्रात रे कह !

नी र जा

दुखअतिथि का धो चरणतल,
विश्व रसमय कर रहा जल;

यह नहीं क्रन्दन हठीले !
सजल पावसमास रे कह !

ले गया जिसको लुभा दिन,
लौटती वह स्वप्न बन बन;

है न मेरी नींद, जागृति
का इसे उत्पात रे कह !

एक प्रिय-दृग-श्यामता सा;
दूसरा स्मित की विभा सा;

यह नहीं निशिदिन इन्हें
प्रिय का मधुर उपहार रे कह !

श्वास से स्पन्दन रहे भर;
लोचनों से रिस रहा उर;

दान क्या प्रिय ने दिया
निर्वाण का वरदान रे कह !

चल क्षणों का क्षणिक संचय;
बालुका से बिन्दु-परिचय;

कह न जीवन तू इसे
प्रिय का निठुर उपहास रे कह !

सौ

तुम दुख बन इस पथ से आना !

शूलों में नित मृदु पाटल सा,
खिलने देना मेरा जीवन,

क्या हार बनेगा वह जिसने सीखा न हृदय को बिंधवाना !

एक सौ एक

नी र जा

वह सौरभ हूँ मैं जो उड़कर;
कलिका में लौट नहीं पाता;
पर कलिका के नाते ही प्रिय जिसको जग ने सौरभ जाना !

नित जलता रहने दो तिल तिल,
अपनी ज्वाला में उर मेरा,
इसकी विभूति में, फिर आकर अपने पद-चिह्न बना जाना !

वर देते हो तो कर दो ना,
चिर आँखमिचौनी यह अपनी,
जीवन में खोज तुम्हारी है मिटना ही तुमको छू पाना !

प्रिय ! तेरे उर में जग जावे,
प्रतिध्वनि जब मेरे पी पी की;
उसको जग समझे बादल में विद्युत् का बन बन मिट जाना !

तुम चुपके से आ बस जाओ,
सुखदुख सपनों में श्वासों में;
पर मन कह देगा यह वे हैं आँखें कह देंगी पहचाना !

जड़ जग के अणुओं में स्मित से,
तुमने प्रिय जब डाला जीवन,
मेरी आँखों ने सोच उन्हें सिखलाया हँसना खिल जाना !

कुहरा जैसे घन आतप में,
यह संसृति मुझमें लय होगी;
अपने रागों से लघु वीणा मेरी मत आज जगा जाना !

तुम दुख बन इस पथ से आना !

एक सौ दो

४९

अलि वरदान मेरे नयन

उमड़ता भव-अतल सागर,
लहर लेते सुख सरोवर;
चाहते पर अश्रु का लघु
बिन्दु प्यासे नयन
प्रिय घनश्याम चातक नयन ।

एक सौ तीन

नी र जा

पी उजाला तिमिर पल में,
फेंकता रविपात्र जल में,
तब पिलाते स्नेह अणु अणु-
को छलकते नयन !
दुखमद के चषक यह नयन !

छू अरुण का किरणचामर;
बुझ गये नभ-दीप निर्भर;
जल रहे अविराम पथ में
किन्तु निश्चल नयन !
तममय विरह दीपक नयन !

उलझते नित बुद्बुदे शत,
घेरते आवर्त्त आ द्रुत;
पर न रहता लेश, प्रिय की
स्मित रंगे यह नयन !
जीवन-सरित-सरसिज नयन !

मैं मिटूँ ज्यों मिट गया घन;
उर मिटे ज्यों तड़ित्-कम्पन;
फूट कण कण से प्रकट हों
किन्तु अगणित नयन !
प्रिय के स्नेह-अङ्कुर नयन !
अलि वरदान मेरे नयन !

एक सौ चार

दूर घर मैं पथ से अनजान !

मेरी ही चितवन से उमड़ा तम का पारावार;
मेरी आशा के नव अङ्कुर शूलों में साकार;

पुलिन सिकतामय मेरे प्राण !

एक सौ पाँच

नी र जा

मेरी निश्वासों से बहती रहती झरझरावत;
आँसू में दिनरात प्रलय के घन करते उतपात;
कसक में विद्युत् अन्तर्धान !

मेरी ही प्रतिध्वनि करती पल पल मेरा उपहास;
मेरी पदध्वनि में होता नित औरों का आभास;
नहीं मुझसे मेरी पहचान !

दुख में जाग उठा अपनेपन का सोता संसार;
सुख में सोई री प्रिय-सुधि की अस्फुट सी झङ्कार;
हो गये सुखदुख एक समान !

बिन्दु बिन्दु दुलने से भरता उर में सिन्धु महान;
तिल तिल मिटने से होता है चिर जीवन निर्माण;
न सुलभी यह उलभन नादान !

पल पल के भरने से बनता युग का अद्भुत द्वार;
श्वास श्वास खोकर जग करता नित दिव से व्यापार;
यही अभिशाप यही वरदान !

इस पथ का कण कण आकर्षण, तृण तृण में अपनाव;
उसमें मूक पहेली है पर इसमें अमिट दुराव;
हृदय को बन्धन में अभिमान !
दूर घर मैं पथ से अनजान !

एक सौ छः

क्या पूजा क्या अर्चन रे ?

उस असीम का सुन्दर मन्दिर मेरा लघुतम जीवन रे !
 मेरी श्वासों करती रहतीं नित प्रिय का अभिनन्दन रे !
 पदरज को धोने उमड़े आते लोचन में जल-कण रे !
 अक्षत पुलकित रोम, मधुर मेरी पीड़ा का चन्दन रे !
 स्नेहभरा जलता है झिलमिल मेरा यह दीपक-मन रे !
 मेरे दृग के तारक में नव उत्पल का उन्मीलन रे !
 धूप बने उड़ते जाते हैं प्रतिपल मेरे स्पन्दन रे !
 प्रिय प्रिय जपते अधर ताल देता पलकों का नर्तन रे !

प्रिय सुधि भूले री मैं पथ भूली !

मेरे ही मृदु उर में हँस बस,
 श्वासों में भर मादक मधु-रस;
 लघु कलिका के चल परिमल से
 वे नभ छाये री मैं वन फूली !

प्रिय सुधि भूले री मैं पथ भूली !

तज उनका गिरि सा गुरु अन्तर,
मैं सिकता-कण सी आई भर;

आज सजनि उनसे परिचय क्या !
वे घनचुम्बित मैं पथ-धूली !

प्रिय सुधि भूले री मैं पथ भूली !

उनकी वीणा की नव कम्पन,
डाल गइ री मुझमें जीवन;

खोज न पाई उसका पथ मैं
प्रतिध्वनि सी सूने में भूली !

प्रिय सुधि भूले री मैं पथ भूली !

५३

जाग वेसुध जाग !

अश्रुकण से उर सजाया त्याग हीरक-हार;
भीख दुख की माँगने फिर जो गया प्रतिद्वार;
शूल जिसने फूल छू चन्दन किया, सन्ताप;
सुन जगाती है उसी सिद्धार्थ की पद-चाप;

करुणा के दुलारे जाग !

एक सौ दस

शङ्ख में ले नाश मुरली में छिपा वरदान,
दृष्टि में जीवन अधर में सृष्टि ले छविमान;
आ रचा जिसने स्वरो में प्यार का संसार,
गूँजती प्रतिध्वनि उसी की फिर क्षितिज के पार;

वृन्दाविपिनवाले जाग !

× × × ×

रात के पथहीन तम में मधुर जिसके श्वास,
फैल भरते लघु कणों में भी असीम सुवास;
कंटकों की सेज जिसकी आँसुओं का ताज,
सुभग ! हँस उठ, उस प्रफुल्ल गुलाब हा सा आज,

बीती रजनि प्यारे जाग !

लय गीत मदिर, गति ताल अमर,

अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

आलोकतिमिर सितअसित चीर,

सागर-गर्जन रुनभुन मँजीर;

उड़ता भ्रुम्भा में अलक-जाल;

मेघों में मुखरित किंकिणि-स्वर !

अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

रविशशि तेरे अत्रतंस लोल;
सीमन्न-जटित तारक अमोल;

चपला विभ्रम, स्मित इन्द्रधनुष.
हिमकरण वन भरने स्वेदनिकर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर

युग हैं पलकों का उन्मीलन
स्पन्दन में अगणित लय जीवन;

तेरी श्वासों में नाच नाच
उठता वेसुध जग सचराचर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

तेरी प्रतिध्वनि बनती मधुदिन;
तेरी समीपता पावस-क्षण;

रूपसि ! छूते ही तुझमें मिट
जड़पा लेता वरदान अमर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

जड़ कण कण के प्याले मलमल;
छलकी जीवनमदिरा छलछल;

पीती थक मुक मुक भूम भूम;
तू घूँट घूँट फेनिल शीकर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

एक सौ तेरह

नी र ज्य

बिखराती जाती तू सहास;
नव तन्मयता उल्लास लास;

हर अणु कहता उपहार बनूँ
पहले छू लूँ जो मृदुल अधर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

ह सृष्टिप्रलय के आलिङ्गन !
सीमा असीम के मूक मिलन !

कहता है तुझको कौन घोर
तू चिर रहस्यमयि कोमलतर !
अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर !

तेरे हित जलते दीप-प्राण;
खिलते प्रसून हँसते विहान;

श्यामाङ्गिनि ! तेरे कौतुक को
बनता जग मिट मिट सुन्दरतर !
प्रिय-प्रेयसि ! तेरा लास अमर !

एक सौ चौदह

उर तिमिरमय घर तिमिरमय
चल सजनि दीपक बार ले !

राह में रो रो गये हैं
रात और विहान तेरे;
काँच से टूटे पड़े यह
स्वप्न, भूलें, मान तेरे;

फूलप्रिय पथ शूलमय
पलकें बिछा सुकुमार ले !

नी र जा

वृषित जीवन में घिरे घन —
बन, उड़े जो श्वास उर से;
पलकसीपी में हुए मुक्ता
सुकोमल और बरसे;

मिट रहे नित धूलि में
तू गूँथ इनका हार ले !

मिलनवेला में अलस तू
सो गई कुछ जाग कर जब,
फिर गया वह, स्वप्न में
मुस्कान अपनी आँक कर तब !

आ रही प्रतिध्वनि वही फिर
नींद का उपहार ले !

चल सजनि दीपक बार ले !

एक सौ सोलह

५६

तुम सो जाओ मैं गाऊँ !

मुझको सोते युग बीते,
तुमको यों लोरी गाते;

अब आओ मैं पलकों में
स्वप्नों से सेज बिछाऊँ !

एक सौ सत्रह

नी र जा

प्रिय ! तेरे नभमन्दिर के
मणिदीपक बुझ बुझ जाते;

जिनका कण कण विद्युत् है
मैं ऐसे प्राण जलाऊँ !

क्यों जीवन के शूलों में
प्रतिक्षण आते जाते हो ?

ठहरो सुकुमार ! गलाकर
मोती पथ में फैलाऊँ !

पथ की रज में हैं अंकित,
तेरे पदचिह्न अपरिचित;

मैं क्यों न इसे अञ्जन कर
आँखों में आज बसाऊँ !

जल सौरभ फैलाता उर,
तब स्मृति जलती है तेरी;

लाचन कर पानी पानी
मैं क्यों न उसे सिंचवाऊँ !

इन भूलों में मिल जातीं,
कलियाँ तेरी माला की

मैं क्यों न इन्हीं काँटों का
संचय जग को दे जाऊँ !

एक सौ अठारह

अपनी असीमता देखो,
लघु दर्पण में पल भर तुम;

मैं क्यों न यहाँ क्षण क्षण को
धो धो कर मुकुर बनाऊँ !

हँसने में छू जाते तुम
रौने में वह सुधि आती;

मैं क्यों न जगा-अणु अणु का
हँसना रोना सिखलाऊँ !

जागो बेसुध रात नहीं यह !

भीगीं मानस के दुखजल से;

भीनी उड़ते सुखपरिमल से;

हैं बिखरे उर की निश्वासें,

मादक मलय-वतास नहीं यह !

पारद के मौती से चञ्चल,
मिटते जो प्रतिपल बन दुल दुल,

हैं पलकों में करुणा के अणु,
पाटल पर हिमहास नहीं यह !

कूलहीन तम के अन्तर में,
दमक गई छिप जो क्षण भर में,

हैं विषाद में बिखरी स्मृतियाँ,
घनचपला का लास नहीं यह !

श्रमकरण में ले, दुलते हीरक
अञ्चल से ढक आशा-दीपक

तुम्हें जगाने आई पीड़ा,
स्वप्नों का परिहास नहीं यह !

केवल जीवन का क्षण मेरे !

फिर क्यों प्रिय मुझको अग जग का प्यासा क्षण क्षण घेरे !

नत धन विद्युत् माँग रहे पल, अम्बर फैलाये नित अञ्चल;
उसको माँग रहे हँस रोकर कितने रात सबेरे !

कलियाँ रोती हैं सौरभ भर, निर्भर मानस आँसू मय कर,
इस क्षण के हित मत्त समीरण करता शत शत फेरे !

तारे बुझते हैं जल निशिभर, स्नेह नया लाते भर फिर फिर,
सागर की लहरों लहरों में करती प्यास बसेरे !

लुटता इस पर मधुपद परिमल, भर जाते गल कर मुक्ताहल,
किसको दूँ किसको लौटाऊँ, लघु पल ही धन मेरे !

एक सौ बाईस

